मंथन कमांक 61

नई अर्थनीति

कुछ सर्वस्वीकृत सिद्धांत हैं–

1 राज्य का एक ही दायित्व होता है जानमाल की सुरक्षा। अन्य सभी कार्य राज्य के कर्तव्य होते है, दायित्व नहीं।

2 सम्पत्ति प्रत्येक व्यक्ति का मौलिक अधिकार होता है। बिना व्यक्ति की सहमति के उसकी सम्पत्ति न टैक्स के रुप में ली जा सकती है, न ही कोई सीमा बनाई जा सकती है।

3 गरीबी, आर्थिक असमानता, बेरोजगारी, अशिक्षा दूर करना राज्य का दायित्व नहीं है। राज्य को इनके बढाने में की जा रही अपनी भूमिका से दूर हो जाना ही पर्याप्त है।

4 किसी भी इकाई के लिए यह आवश्यक है कि वह अपनी अर्थव्यवस्था के सुचारु संचालन के लिए एक बजट अवश्य बनावे और उसका पालन करे।

5 अर्थव्यवस्था में बाजार की स्वतंत्रता में सरकार का कोई भी हस्तक्षेप घातक होता है।

6 राजनीति से जुडा प्रत्येक व्यक्ति बाजारवाद का अधिक विरोध करता है।

7 महंगाई एक अस्तित्वहीन समस्या है। मंहगाई होती ही नहीं। सरकारें जानबूझकर मुद्रा स्फीति बढाते है और उसे मंहगाई कहकर प्रचारित करते है।

समाजवाद का अर्थ होता है समाज सर्वोच्च। जिस तरह सम्प्रदाय वाद ने धर्म शब्द का अर्थ विकृत करके उसे संगठनात्मक स्वरूप दे दिया उसी तरह साम्यवाद ने समाजवाद का अर्थ विकृत करके उसे अर्थ प्रधान कर दिया। आज समाज वाद शब्द पूरी तरह बदनाम हो गया है । यही कारण है कि हमलोगों ने समाजवाद शब्द को छोडकर समाजीकरण शब्द का उपयोग शुरू कर दिया। साम्यवाद मे कुव्यवस्था होती है और समाजवाद मे अव्यवस्था। वास्तविक समाजवाद अर्थात समाजीकरण मे व्यवस्था होती है। समाजीकरण मे राज्य किसी सामाजिक इकाई की आंतरिक स्वतंत्रता मे कोई हस्तक्षेप नहीं कर सकता बल्कि ऐसी स्वतंत्रता की सुरक्षा की गारंटी देता है। इस गारंटी के परिपालन मे हो रहे खर्च तक ही राज्य आर्थिक व्यवस्था कर सकता है, इससे अधिक नहीं। आज तो स्थिति यह है कि राज्य पूरे समाज की अर्थ नीति का निर्माता बन गया है। राज्य गरीबी दूर कर रहा है तो रोजगार शिक्षा स्वास्थ भी अपने जिम्मे ले रहा है। न्याय और सुरक्षा तो वह सम्हाल नही पा रहा और भूख मिटाने के प्रयत्न कर रहा है। परिणाम यह है कि न उससे भूख मिट रही है न असुरक्षा।

भारतीय संविधान में सम्पत्ति को मौलिक अधिकार माना गया था जिसे बहुत बाद में कुछ राजनेताओं ने संविधान से निकालकर मनमाने तरीके से समाजवाद शब्द घुसा दिया। सम्पत्ति मौलिक अधिकार होता है और कोई भी व्यक्ति या सरकार उसकी सहमति के बिना कोई टैक्स नहीं ले सकती। दुनिया में जो टैक्स की परंपरा है वह एक प्रकार से व्यक्ति के जानमाल की सुरक्षा का टैक्स है और उस टैक्स को उसकी सहमति मान लिया जाता है। यदि कोई सरकार अनावश्यक टैक्स वसूल करती है तो विश्व व्यवस्था उसे इसलिए रोक सकती है क्योकि व्यक्ति विश्व व्यवस्था का सदस्य है, राष्ट्र का नहीं। राष्ट्र के लिए तो व्यक्ति सिर्फ नागरिक मात्र होता है। यह अलग बात है कि अभी दुनिया में ऐसी कोई सर्वस्वीकृत विश्व व्यवस्था नहीं बन पायी है जिससे व्यक्ति और नागरिक की अलग अलग पहचान बन सके, क्योंकि साम्यवाद और इस्लाम व्यक्ति के मूल अधिकारों को ही नहीं मानता। इसका अर्थ हुआ कि या तो साम्यवाद और इस्लाम अपने विचारों में संशोधन करें अथवा समाप्त हो जाये तभी कोई सर्वस्वीकृत विश्व व्यवस्था बन सकती है। यह हमारा सौभाग्य है कि भारत इस्लाम और साम्यवाद से मुक्त है। भारत में लोकतंत्र भी है और भारत विश्व व्यवस्था के साथ जुडा हुआ भी है।

भारत की सरकारे निरंतर प्रयास करती हैं कि गरीबी , बेरोजगारी,मुद्रा स्फीति, आर्थिक असमानता, श्रमशोषण जैसी आर्थिक समस्यायें लगातार बढती रहें। इसके लिए वे निरंतर प्रयत्नशील रहती है क्योंकि यदि गरीबी , बेरोजगारी,मुद्रा स्फीति,श्रमशोषण ही कम हो जायेंगे तो सरकारों के पास राजनीति का खेल खेलने के लिए कोई खुला मैदान ही नहीं मिलेगा। यदि सरकारें इनसे बाहर हो जाये तो ये समस्याये अपने आप सुलझ सकती हैं।

मैंने बजट पर बहुत विचार किया। टैक्स इस प्रकार से लगाया जाना चाहिए कि वह गरीब ग्रामीण श्रमजीवी को बिल्कुल प्रभावित न करें और सक्षम व्यक्तियों से ही पूरा कर लिया जाये। इसका अर्थ हुआ कि यदि उपभोक्ता वस्तुओं से कर लेना बिल्कुल मजबूरी हो तो सभी वस्तुओं की सुची बनाकर उसमें कमानुसार नीचे से टैक्स इस प्रकार लगे कि उपर जाते जाते वह शून्य हो जाये। रोटी, कपडा ,मकान, दवा कमानुसार उपर से शुरु होते है। उसके बाद आवागमन, शिक्षा, स्वास्थ्य का नंबर आता है। उसके बाद ही मनोरंजन की वस्तुये होती है। सरकार को रोटी, कपडा, मकान, दवा को टैक्स फ्री रखना चाहिए था किन्तु सरकारें आमतौर पर इन पर टैक्स लगाती है और आवागमन ,मोबाईल जैसी वस्तुओं को आम उपयोग की वस्तु बताकर उन्हें सस्ता रखती है। इसी तरह राज्य का यह दायित्व नहीं कि वह आर्थिक विषमता दुर करे। राज्य तो आर्थिक विषमता दूर करने के नाम पर ऐसी नीति बनाता है जिससे आर्थिक विषमता बढती चली जाती है। कितने दुख की बात है कि भारत आर्थिक मामलों में इतनी तेजी से आगे आ रहा है इसके बाद भी भारत में 20 करोड ऐसे लोग है जो तीस रु से कम पर जीवन जीने के लिए मजबूर है। इसका मुख्य कारण यह है कि सरकारें कृत्रिम उर्जा को इतना सस्ता बनाकर रखती है कि वे गरीब ग्रामीण श्रमजीवी को प्रतिस्पर्धा से बिल्कुल बाहर कर देती है। राष्ट्रीय प्रगति का सर्वश्रेष्ठ मापदण्ड यह होता है कि देश में श्रम का मूल्य कितना बढा क्योंकि श्रम का मूल्य बढना ही गरीब ग्रामीण श्रमजीवी की प्रगति का एकमात्र मापदण्ड होता है। स्वतंत्रता के बाद के 70 वर्षो मे श्रम का मूल्य भारत में करीब दोगुना ही बढ पाया जबकि बुद्धिजीवियों का जीवन स्तर लगभग आठ गुना आर पूँजीपतियों का औसत 64 गुना बढा माना जाता है। यह हमारे लिए राजनैतिक षडयंत्र का स्पष्ट प्रमाण है। राज्य को व्यक्ति की स्वतंत्र प्रतिस्पर्धा में कभी बाधक नहीं बनना चाहिए किन्तु राज्य प्रतिस्पर्धा में बाधक बनता है। वह खुले बाजार में भी हस्तक्षेप करता है। वह किसानों के उत्पादन का मूल्य भी नहीं बढने देता। यहॉ तक कि राज्य प्राकृतिक और जैविक खाद की तुलना में कृत्रिम खाद तक को सबसीडी देता रहता है क्योंकि राज्य की नीयत में खोट है। राज्य निजी स्कूलों से स्वतंत्र प्रतिस्पर्धा न करके उन्हें हर तरह से कानून के जाल में फसा कर रखना चाहता है।

मैं समझता हूँ कि भारत नई अर्थव्यवस्था के माध्यम से सारी दुनिया के सामने आदर्श प्रस्तुत कर सकता है। सारी दूनिया यह प्रयास करती है कि वह अपना सामान दूसरे देशों में भेजकर अपनी आर्थिक स्थिति को मजबूत करे भले ही उससे आयातक देश के गरीब लोगां का शोषण ही क्यों न हो। इस निर्यात की बीमारी के कारण ही अपने देश में कृत्रिम उर्जा को इतना सस्ता रखा जाता है कि वहॉ श्रम का मूल्य न बढे और निर्यातक वस्तुये दुनिया से प्रतिस्पर्धा कर सके। भारत को इस प्रकार की पहल करनी चाहिए कि भारत न निर्यात के लिए अपने देश का शोषण करेगा, न ही आयात की मजबूरी में फंसा रहेगा। इसके लिए पूर आर्थिक ढांचे को बदलने की आवश्यकता है। सिर्फ दो प्रकार के टैक्स लगाये जाने चाहिए। 1 सुरक्षा कर 2 समानता कर। सुरक्षा कर के रुप में भारत के प्रत्येक व्यक्ति से उसकी सम्पूर्ण सम्पत्ति पर एक पर दो प्रतिशत वार्षिक टैक्स लेना ही पर्याप्त होगा। इस टैक्स के माध्यम से सरकार का सेना पुलिस वित विदेश न्याय जैसा आवश्यक खर्च पूरा हो जायेगा। अन्य सब प्रकार के इन कम टैक्स या अन्य टैक्स पूरी तरह समाप्त हो जायेंगे। समानता कर के रुप में भारत में उपयोग की जाने वाली सम्पूण कृत्रिम उर्जा का मूल्य बढाकर ढाई गुना कर दिया जायेगा और इससे प्राप्त सारा धन प्रत्येक व्यक्ति को बराबर बराबर इस प्रकार बांट दिया जायेगा जिससे उसकी आवश्यकताये पूरी हो सके। किसी को किसी भी प्रकार की अन्य सुविधाये समाप्त कर दी जायेगी। किसी अन्य सुविधा के लिए सरकार बाजार से प्रतिस्पर्धा करेगी और सुविधा के लिए फोस ले सकती है किन्तु कर नहीं।

मेरे आकलन के अनुसार दो प्रतिशत सम्पत्ति कर से पूरे देश में करीब 20 लाख करोड रुपया सरकार को मिल सकता है। इस बजट में सरकार का सारा खर्च अच्छी तरह चल सकता है। कत्रिम उर्जा की मूल्यवृद्धि से भी सरकार को वार्षिक 20 लाख करोड मिल सकता है। यह राशि भी प्रत्येक व्यक्ति को 15 हजार रु वार्षिक के हिसाब से आवश्यक उपयोग के लिए दी जा सकती है। इसका अर्थ हुआ कि पांच व्यक्तियों के

परिवार को करीब 75 हजार रु वार्षिक मिल सकता है। इस कार्य को एकाएक करना कठिन है । सम्पत्ति कर तो तत्काल किया जा सकता है किन्तु कृत्रिम उर्जा की मूल्यवृद्धि एकसाथ करना अव्यवस्था का कारण बन सकती है। मेरे विचार से प्रतिवर्ष 20 प्रतिशत मूल्यवृद्धि करके उससे प्राप्त सारा धन प्रत्येक व्यक्ति को समान स्तर पर दिया जा सकता है। यदि सबकी सहमति हो तो यह समानता कर से प्राप्त राशि सिर्फ आधी गरीब आबादी में भी बांटी जा सकती है जिससे उन्हें वर्ष में 30 हजार रु प्रति व्यक्ति भी मिल सकता है। मुझे तो लगता है कि भारत की जनता इस समानता कर और वितरण का पुरजोर समर्थन करेगी। वर्तमान समय में जनता कृत्रिम उर्जा मूल्यवृद्धि का इसलिए विरोध करती है कि वह सरकार के खजाने में जाता है उसके व्यक्तिगत खजाने में नहीं।

भारत जिस तरह भ्रष्टाचार, अपराध वृद्धि, अनैतिकता की दिशा में बढ रहा है उसके आर्थिक समाधान के रुप में नई अर्थनीति बहुत सहायक हो सकती है। सरकार को सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था का निजीकरण कर देना चाहिए। मांग और पूर्ति के आधार पर वस्तु से अपना महत्व और मूल्य निर्धारित करने की स्वतंत्र हो। मांग और पूर्ति के आधार पर मजदूर और मालिक स्वतंत्रता से प्रतिस्पर्धा कर सकें। सरकार अपना अपराध नियंत्रण मे भी अधिक सफल हो सकेगी क्योंकि अन्य आलतू फालतू खर्चे बंद होकर सरकार को सेना पुलिस और न्याय पर अधिक खर्च करने की सुविधा प्राप्त हो जायेगी।

मैं व्यक्तिगत रुप से महसूस करता हूँ कि मैं वर्तमान समय में दुनिया का सबसे अधिक सुखी और संतुष्ट व्यक्ति हूँ। आर्थिक, सामाजिक, तथा वैचारिक धरातल पर मैंने क्षमता और कल्पना से अधिक उपलब्धि प्राप्त की है। मैंने हमेशा आर्थिक, सामाजिक मामलों में लिक से हटकर नये मार्ग तलाशे है। इन सबका श्रेय मैं नई आर्थिक सामाजिक राजनैतिक व्यवस्था को देता हूँ। इसलिए मैं इस नई अर्थव्यवस्था का पक्षधर हूँ।

मंथन कमांक 62

भौतिक या नैतिक उन्नति

कुछ सर्वस्वीकृत सिद्धांत हैं–

1 किसी भी व्यक्ति की भौतिक उन्नति का लाभ मुख्य रुप से व्यक्तिगत होता है और नैतिक उत्थान का लाभ समूहगत या सामाजिक।

2 अधिकारों के लिए चिंता या प्रयत्न भौतिक उन्नति के उददेश्य से किये जाते है और कर्तव्यों का प्रयत्न नैतिक उत्थान के निमित्त होता है । कर्तव्य हमेशा समाज को लाभ देते है।

3 धर्म हमेशा ही नैतिकता को मजबूत करता है। समाज नैतिकता और भौतिक उन्नति के बीच संतुलन बनाता है। राज्य सिर्फ आपराधिक आचरण से रोकता है।

4 व्यक्ति की भौतिक उन्नति और नैतिक उन्नति के बीच संतुलन होना चाहिए। सिर्फ भौतिक उन्नति हमेशा गलत दिशा में ले जा सकती है और सिर्फ नैतिकता व्यक्ति को निराश या असफल भी कर सकती है।

5 हर शरीफ या धूर्त चाहता है कि दूसरे लोग भौतिक प्रगति की जगह नैतिकता पर अधिक ध्यान दं। शरीफ आदमी अपने निकट के लोगों को अधिक कर्तव्य प्रेरित करता है तो धूर्त दूसरे लोगों को अधिक कर्तव्य प्रेरित करता है।

यदि हम भौतिक उन्नति और नैतिक पतन का विश्वव्यापी आकलन करें तो स्पष्ट है कि सारी दुनिया बहुत तेज गति से भौतिक प्रगति की दिशा में बढ रही है। सब प्रकार की सुविधाएं बढ रही ह। ब्रम्हांड की खोज तक दुनिया निरंतर तेज गति से आगे बढ रही है । यहॉ तक कि गॉड पार्टकिल तक की खोज अंतिम चरण में है। विज्ञान ने हर मामले में इतनी सुविधाय जुटा दो ह कि निकट भविष्य में कृत्रिम मनुष्य तक बनने की संभावनाए प्रबल हो गई ह। इस भौतिक प्रगति के समानांतर विज्ञान ने विनाश के भी सारे साधन उपलब्ध करा दिये है। कब दुनिया में विश्वयुद्ध हो जाये और मनुष्य समाप्त हो जाये इसकी संभावना निरंतर बनी हुई है। भौतिक प्रगति के बाई प्रोडक्ट के रुप में पर्यावरण प्रदूषण भी एक समस्या बना हुआ है। नई नई बीमारियॉ भी

बढ रही है तो उनका ईलाज भी उसी तरह बढ रहा है। बीमारियां और ईलाज एक दूसरे के पूरक बन गये है। जिस तरह दुनिया का प्रत्येक मनुष्य भौतिक प्रगति से सुख का अधिक अनुभव कर रहा है ठीक उसी गति से दुनिया का प्रत्येक व्यक्ति किसी अज्ञात भय से चिंतित भी है। ये दोनों प्रकियाएं पूरी दुनिया में एक साथ चल रही ह। भौतिक प्रगति की दुनिया में जो गति है ठीक वही गति नैतिक पतन की भी दिख रही है । पूरी दुनिया का हर व्यक्ति प्रतिक्षण नैतिकता के मापदण्ड में नीचे जा रहा है। दुनिया इस प्रकार केन्द्रित हो गई है कि यदि दो व्यक्ति युद्ध की घोषणा कर द तो सारी दुनिया मिलकर भी उन दोनों की इच्छा के विपरीत अपनी सुरक्षा नहीं कर सकती और दोनों शक्तियों के बीच निरंतर टकराव का खतरा बना रहता है, बना हुआ है। एक तरफ मानवता के नाम पर सारी दुनिया को प्रवचन देने का काम भी चलता रहता है तो दूसरी तरफ सारी दुनिया में नैतिकता के सारे मापदण्डों के विपरीत तिकडम भी बढती जा रही है। पूरी मानव जाति के स्वभाव में प्रतिक्षण आक्रोश की मात्रा बढ रही ह। हर आदमी मजबूत से डर रहा है और कमजोर को डरा रहा है।

भारत भी भौतिक प्रगति और नैतिक पतन की विश्वव्यापी परिस्थितियों से अलग नहीं है। भारत में भी व्यक्ति से लेकर समूह तक की बहुत तेज गति से भौतिक उन्नति हो रही है। एक आकलन के अनुसार वर्तमान समय में भारत की भौतिक उन्नति प्रतिवर्ष छः से सात प्रतिशत की है। दूसरी ओर यदि हम नैतिक पतन का आकलन करे तो नैतिक पतन की भी वृद्धि दर प्रतिवर्ष छः से सात प्रतिशत अनुमानित होगी ही। छोटी छोटी बच्चियॉ तक सुरक्षित नहीं है। भाई भाई में विवाद तो आम बात हो गई है। किन्तु पति पत्नी के बीच भी निरंतर टकराव बढ रहे है। परिवार व्यवस्था टूट रही है। अविश्वास बढ रहा है। न्यायालयों में मुकदमों की संख्या निरंतर बढ रही है । नकली संत एक बहुत बडी समस्या के रुप में सामने आ गये है। भ्रष्टाचार, जालसाजी, धोखाधडो, मिलावट अनियंत्रित होती जा रही है। समझ में नहीं आ रहा कि भौतिक प्रगति और नैतिक पतन के मामले में भारत किस दिशा में अधिक तेज गति से बढ रहा है। न्यायालयों में धर्मग्रंथो के उपर हाथ रखकर झूठी कसम खाना एक सामान प्रकिया बन गई है। राजनीति और धर्म तो लगभग व्यवसाय का रूप ले ही चुके है किन्तु समाज सेवा के नाम पर बनी संस्थाए भी अब व्यावसायिक केन्द्र बनती जा रही है।

स्पष्ट दिखता है कि भौतिक प्रगति और नैतिक पतन के बीच दूर दूर तक कोई रिश्ता नहीं है किन्तु यह बात भी साफ है कि भौतिक प्रगति और नैतिक पतन एक साथ समान गति से आगे बढ रहे है। भारत के जिन पहाडी क्षेत्रां का भौतिक विकास कम हुआ है वहॉ नैतिक पतन भी कम होना संदेह पैदा करता है कि दोनों के बीच में कही न कही कोई रिश्ता अवश्य है जो हमें नहीं दिखता।

भौतिक उन्नति में विज्ञान का बहुत बडा योगदान है। इसी तरह नैतिक पतन में भी राज्य व्यवस्था की महत्वपूर्ण भूमिका है। दुनिया में जिस गति से विज्ञान तरक्की कर रहा है उसी गति से समाज व्यवस्था भी निरंतर कमजोर हो रही है। भौतिक उन्नति और समाज व्यवस्था के बीच सबसे अच्छा संतुलन भारतीय संस्कृति में रहा है। प्राचीन समय में भारत भौतिक प्रगति में भी सारी दुनिया में आगे था और नैतिकता के आधार पर भी। जब भारत में वर्ण व्यवस्था जन्म के आधार पर होने लगी तब समाज व्यवस्था छिन्न भिन्न हुई। परिणाम हुआ नैतिक पतन और आपसी टकराव जो धीरे धीरे हमारे गुलामी में बदल गया। इसी तरह पूरी दुनिया में जब इस्लाम और साम्यवाद ने मजबूत होकर धर्म और समाज की व्यवस्था को छिन्न भिन्न किया तब पूरी दुनिया में भी नैतिक पतन तेज गति से बढा। साम्यवाद ने धर्म को भी अफीम बता दिया तो उसने परिवार व्यवस्था को भी अप्रासंगिक सिद्ध कर दिया। व्यक्तिगत स्वतंत्रता तक को राज्याश्रित बना दिया। परिणाम हुआ भयंकर नैतिक पतन जिसका दुष्परिणाम सारी दुनिया भोग रही है और भारत भी उससे बहुत प्रभावित है।

अब हमें भौतिक उन्नति के साथ साथ नैतिक उत्थान को भी आगे बढाने का प्रयास करना चाहिए। दुनिया इस दिशा में पहल नहीं कर सकेगी किन्तु भारत से इसकी शुरुवात हो सकती है क्योंकि भारत को इसके संतुलन की लाभ हानि का पर्याप्त अनुभव है। भारत में वैसे भी साम्यवाद लगभग समाप्त है और इस्लाम का भी भारतीय संस्करण धोरे धीरे आगे आ रहा है। नैतिक प्रगति की शुरुवात परिवार व्यवस्था, गांव व्यवस्था और समाज व्यवस्था को मजबूत करके किया जा सकता है। इस दिशा में निरंतर प्रयत्न जारी है। नैतिक उत्थान के लिए धर्म व्यवस्था को भी आगे लाने का प्रयास करना चाहिए। इस मामले में हिन्द, मुसलमान,इसाई , सिख का कोई भेद उचित नहीं है। साथ ही भारत में कर्म के आधार पर वर्ण व्यवस्था का भी

प्रयोग करना चाहिए। यदि ज्ञान, सुरक्षा, सुविधा और सेवा के आधार पर बचपन से ही व्यक्तियों के योग्यतानुसार समूह बनाकर उन्हें उस दिशा में ट्रेनिंग दी जायगी तो नैतिक पतन को रोका जा सकता है। हमे यह भी करना होगा कि राज्य समाज व्यवस्था मे हस्तक्षेप न करे बल्कि समाज राज्य व्यवस्था को नियंत्रित कर सकता है क्योकि समाज राज्य से उपर होता है। मैं चाहता हूँ कि भौतिक उन्नति और नैतिक पतन के एक साथ चलने का जो कलंक दुनिया के माथे पर लगा है उसे धोने की शुरुवात भारत से हो सकती है।

मंथन क्रमांक 63

भारत की आर्थिक समस्या और समाधान

कुछ सर्व स्वीकृति सिद्धान्त है

1 पूरी दुनिया तेज गति से भौतिक उन्नति कर रही है और उतनी ही तेज गति से नैतिक पतन हो रहा है।

2 प्राचीन समय मे भारत विचारों का भी निर्यात करता था तथा आर्थिक दृष्टि से भी सम्पन्न था। दो तीन हजार वर्षो से भारत सभी मामलो मे पीछे चला गया है।

3 राजनीति धर्म समाज सेवा आदि सभी क्षेत्रो का व्यवसायी करण हुआ है । साथ सम्पूर्ण व्यवसाय का भी राजनीतिकरण हो गया है।

4 सामाजिक समस्याओ का समाधान समाज को, आर्थिक समस्याओ का समाधान स्वतंत्र बाजार को तथा प्रशासनिक समस्याए का समाधान राज्य को करना चाहिये। राज्य को हर मामले मे हस्तक्षेप नही करना चाहिये।

दुनिया के हर क्षेत्र मे हर व्यवस्था का व्यवसायीकरण हो गया है। साथ ही हर व्यवसाय का राजनीति करण भी हुआ है। राजनीति और व्यवसाय एक दूसरे के पूरक बन गये है। राजनीति हर मामलेमे व्यवसाय को दोषी मानती है तो व्यवसाय राजनीति को । उचित होता कि दोनो अपनी अपनी सीमाओ मे रहते और किसी का उलंधन नहीकरते किन्तु उलंधन सारी दुनिया मे जारी है । भारत मे तो विशेष रूप से दोनो एक साथ एक दूसरे को नियंत्रित करने का प्रयास कर रहे हैं। यही कारण है कि लगातार समस्याए बढती जा रही हैं। भारत मे कुल मिलाकर 11 समस्याएं लगातार बढती जा रही है। उनमे पांच समस्या आपराधिक, दो अनैतिक, दो सांगठनिक और सिर्फ दो आर्थिक समस्याएं हैं। पांच प्रकार की आपराधिक समस्याए है 1 चोरी डकैती लूट 2 बलात्कार 3 मिलावट कमतौल 4 जालसाजी धोखाधडी 5 हिंसा बल प्रयोग । ये सभी समस्याए राज्य की कम सक्रियता के कारण बढ रही है। दो नैतिक समस्याए भ्रष्टाचार और चरित्र पतन तथा दो संगठनात्मक समस्याए साम्प्रदायिकता और जातीय कटुता राज्य की अधिक संक्रियता के कारण लगातार बढ रही है। यदि राज्य नैतिक और संगठनात्मक समस्याओं से दूर होकर आपराधिक समस्याओं के समाधान मे अधिक सक्रिय हो जाये तो भारत मे समस्याए अपने आप सुलझ जायेंगी । आर्थिक समस्या भारत मे दो ही है। 1 आर्थिक असमानता 2 श्रम शोषण । तीसरी कोई आर्थिक समस्याए भारत मे नहीं है। ये दो समस्याये भी राज्य की अति सक्रियता के कारण बढी हैं। यदि राज्य इनके समाधान से स्वयं को दूर कर दे तो ये समस्या बहुत कम हो जायेंगी । राज्य इन दो समस्याओ को अप्रत्यक्ष रूप से बढाता रहता है और दूसरी ओर समाधान का नाटक भी करते रहता है।

वर्तमान राज्य की भूमिका विल्लियो के बीच बंदर के समान होती है जो हमेशा चाहता है कि बिल्लियो की रोटी कभी बराबर न हो । बंदर हमेशा रोटी को बराबर करने का प्रयास करता हुआ दिखे किन्तु होने न दे तथा छोटी रोटी वाली बिल्ली के मन मे असंतोष की ज्वाला हमेशा जलती रहे। यदि ये तीनो काम एक साथ नही होंगे तो लोकतंत्र मे बंदर भूखा ही मर जायेगा। राज्य भी ये तीनो काम हमेशा जारी रखता है। राज्य की अर्थ नीति हमेशा आर्थिक विषमता तथा श्रम शोषण को बढाते रहती है। दूसरी ओर राज्य हमेशा मंहगाई गरीबी बेरोजगारी जैसी अस्तित्वहीन समस्याओ का समाधान करते रहता है। इसके साथ ही राज्य हमेशा गरीब और अमीर क बीच असंतोष की ज्वाला को जलाकर रखना चाहता है जिससे वर्ग विद्वेष बढता रहे और राज्य उसका समाधान करता रहे। दुनियां जानती है कि भारत मे मंहगाई धट रही है, गरीबी भी घट रही है, आम

लोगो का जीवन स्तर सुधर रहा है। किन्तु राज्य दोनो को जिंदा रखे हुए है। दुनियां जानती है कि श्रम और बुद्धि के बीच लगातार दूरी बढती जा रही है किन्तु भारत सरकार गरीब ग्रामीण श्रमजीवी कृषि उत्पादन पर भारी से भारी टैक्स लगाकर शिक्षा स्वास्थ जैसे अनेक कार्यो पर खर्च करती है। राज्य की गलत अर्थनीति के कारण पांच समस्याए वर्तमान मे दिख रही हैं। 1 ग्रामीण और छोटे उधोगो का बंद होकर शहरी और बडे उधोगो मे बदलना। 2 किसान आत्महत्या। 3 पर्यावरण का प्रदूषित होना । 4 आयात निर्यात का असंतुलन 5 विदेशी कर्ज का बढना। इन पांचो समस्याओ से भारत परेशान है। भारत सरकार इन समस्याओ के समाधान के लिये भी प्रयत्न कर रही है किन्तु उसके अच्छे परिणाम नही आ रहे है। दूसरी ओर आर्थिक असमानता और श्रम शोषण भी बढता जा रहा है। 70 वर्षो मे गरीब ग्रामीण श्रम जीवी छोटे किसान का जीवन स्तर दो गुना सुधरा है तो बुद्धिजीवी शहरी बडे किसान का आठ गुना और पूंजीपतियो का 64 गुना। देश की आर्थिक उन्नति का लाभ कमजोर लोगो को 1 प्रतिशत तो सम्पन्न लोगो को पंद्रह प्रतिशत तक हो रहा है। आज भी भारत मे अनेक लोग अथाह सम्पत्ति के मालिक बन गये है। तथा वे लगातार हवाई जहाज की रफतार से आगेबढ रहे है तो दूसरी ओर भारत मे बीस करोड ऐसे भी लोग है जो सरकारी आकडो के अनुसार बत्तीस रूपया प्रतिदिन से भी कम पर जीवन यापन कर रहे है। मुझे तो लगता है कि सरकार पूरी अर्थ व्यवस्था को पूरीतरह स्वतंत्र कर देती तो ये 32 रूपया वाले बहुत जल्दी 100 रूपये तक पहुच जाते। हो सकता है इस आर्थिक स्वतंत्रता के परिणाम स्वरूप कुछ बुद्धि जीवियो और सम्पन्नो की वृद्धि की रफतार कुछ कम हो जाती । गरीब ग्रामीण श्रमजीवी पर टैक्स लगाकर शिक्षा पर खर्च करना यदि बुद्धिजीवियो का षणयंत्र नही है तो और क्या है। रोटी कपडा मकान दवा जैसी मूलभूत आवश्यक वस्तुओ पर टैक्स लगाकर आवागमन को सस्ता करना सुविधाजनक बनाना यदि पूंजीपतियों का षणयंत्र नही है तो और क्या है। गांवो के पर्यावरण से मुक्त वातावरण से निकलकर शहरो के गंदे वातावरण की ओर आमलोगो को आकर्षित करना और फिर उस गंदगी को साफ करने का ढोंग करना षणयंत्र नही तो क्या है। हमारे प्रधानमंत्री मन की बात मे लोगो से माग करते हैं कि आप पानी बचाइये बिजली बचाईये इस बचे हुए पानी से दिल्ली और बम्बई मे कृत्रिम वर्षा कराई जायेगी । इस बची हुई बिजली से शहरो की रोशनी जगमग की जायेगी। यह प्रधान मंत्री का आहवान नाटक नही है तो क्या है। भारत मे आर्थिक समस्याए बढ नही रही है बल्कि निरंतर बढाई जा रही हैं और उसका उददेश्य है कि बंदर रूपी राज्य भूखा न मर जाये । इसका अर्थ है कि राज्य निरंतर शक्तिशाली बना रहे और भारत की जनता राज्य आश्रित रहे। कभी समझदार नही हो जाये । राज्य लोकतांत्रिक तरीके से आर्थिक असमानता और श्रम शोंषण को बढाने के लिये चार काम जोर देकर करता है। । 1 कृत्रिम उर्जा की मूल्य वृद्धि न हो । 70 वर्षो मे कोई ऐसा वर्ष नही आया जब डीजल पेट्रोल बिजली केरोशिन कोयला गैस आदि की आंशिक भी मूल्य वृद्धि हुई हो। सारा देश मूल्य वृद्धि को महसूस करता है किन्तु सच्चाई यह है कि आज तक मूल्य वृद्धि हुई ही नही है। जिसे मूल्य वृद्धि कहा जाता है वह तो मूद्रा स्फीति है । जान बूझकर प्रतिवर्ष घाटे का बजट बनाया जाता है जिससे प्रति वर्ष मुद्रा स्फीति बढती रहे और लोग मंहगाई मूल्य वृद्धि से अपने को परेशान समझते रहें।

2 कृत्रिम श्रम मूल्य वृद्धि के प्रयत्न । राज्य प्रतिवर्ष श्रम मूल्य मे वृद्धि की घोषणा करता है। यह श्रम मूल्य वास्तविक नही होता बल्कि नकली होता है। राज्य द्वारा घोषित श्रम मूल्य जितना अधिक होता है उतनी ही वास्तव मे श्रम की मांग बाजार मे घट जाती है और वास्तविक श्रम मूल्य कम हो जाता है। राज्य इसे ही अपनी उपलब्धि मानता है। यदि राज्य श्रम मूल्य वृद्धि बंद कर दे और न्यूनतम श्रम मूल्य को इस प्रकार घोषित करे जिस तरह उसने ग्रामीण रोंजगार गारंटी योजना घोषित की है तब तो बाजार पर अच्छा प्रभाव पडेगा । अन्यथा श्रम मूल्य वृद्धि की सरकारी योजना श्रम मूल्य वृद्धि पर हमेशा बुरा असर डालती है। राज्य निरंतर ऐसा कर रहा है।

3 शिक्षित बेरोजागर शब्द की उत्पत्ति। एक तरफ तो राज्य गरीब ग्रामीण श्रमजीवी कृषि उत्पाद पर भारी टैक्स लगाकर शिक्षा और आवागमन पर खर्च करता है तो दूसरी ओर शिक्षित बेरोजगारी को दूर करने का भी निरंतर प्रयास करता है। जबकि सच्चाई यह है कि शिक्षित व्यक्ति कभी बेरोजगार होता ही नही। श्रम जीवी के पास रोजगार का एक ही माध्यम होता है और शिक्षित व्यक्ति के पास रोजगार के लिये श्रम तो होता ही है विकल्प के रूप मे उसके पास शिक्षा का अतिरिक्त माध्यम भी होता है। इसका अर्थ हुआ कि जिसके पास शिक्षा नहीं है वही बेरोजगार हो सकता हे। जिसके पास श्रम भी है और शिक्षा भी हे वह बेरोजगार हो ही नही सकता। बुद्धिजीवियो ने बेरोजगारी की परिभाषा बदल दी। बेरोजगारी हमेशा श्रम के साथ जुडी होनी चाहिये। रोजगार की परिभाषा इस प्रकार होनी चाहिये कि न्युनतम श्रममुल्य पर योग्यता अनुसार कार्य का अभाव। एक व्यक्ति भूखा और मजबूर होने के कारण सौ रूपये मे काम कर रहा है तो सरकार उसे रोजगार प्राप्त मान लेती है। दूसरी ओर एक पढा लिखा व्यक्ति पाच सौ रूपये या 1000 रूप्ये प्रतिदिन पर भी काम करने को तैयार नही है उसे बेरोजगार माना जाता है। यह बेरोजगारी की गलत परिभाषा का परिणाम है।

4 जातीय आरक्षण। स्वतंत्रता के पूर्व बुद्धिजीवियो ने सम्पूर्ण समाज मे जन्म के आधार पर अपनी श्रेष्ठता को आरक्षित कर लिया था ब्राम्हण का लडका ब्राम्हण और शुद्र का लडका श्रमिक ही बनेगा। यह बाध्यकारी कर

दिया गया था । इस आरक्षण ने भारी विषंगतियां पैदा की थी । स्वतंत्रता के बाद इस आरक्षण का भरपूर लाभ भी भीम राव अम्बेडकर ने उठाया । उन्होने बुद्धिजीवियो का पक्ष लेकर सवर्ण बुद्धिजीवियो और अवर्ण बुद्धिजीवियो के बीच एक समझौता करा दिया जिसका परिणाम हुआ कि श्रम बेचारा अलग थलग पड गया। आज भी 90 प्रतिशत आदिवासी हरिजन उसी प्रकार गरीब ग्रामीण श्रमजीवी का जीवन जीने के लिये मजबूर है। और बदले मे चार पांच प्रतिशत अवर्ण बुद्धिजीवी भारी उन्नती करके इन बेचारो का शोषण कर रहे है। पूरी विडम्बना है कि भारत का हर सवर्ण और अवर्ण बुद्धिजीवी भीम राव अम्बेडकर की भूरि भूरि प्रशंसा करता है क्योकि भीम राव अम्बेडकर ही अकेले ऐसे व्यक्ति हुए है जिन्होने हजारो वर्षो से चले आ रहे श्रम शोषण को संवैधानिक स्वरूप दे दिया।

मेरे विचार मे भारत की सभी आर्थिक समस्याए राज्य निर्मित ह। राज्य अर्थ व्यवस्था को पूरी तरह बाजार आश्रित कर दे तो य समस्याए बहुत कम हो जायेगी। इसके साथ साथ यदि कृत्रिम उर्जा का वर्तमान मूल्य ढाई गुना बढाकर पूरी धन राशि प्रत्येक व्यक्ति को प्रतिमाह उर्जा सब्सीडी के रूप मे बराबर बराबर बांट दिया जाये तो दो वास्तविक समस्याए श्रम शोषण और आर्थिक असमानता भी अपने आप सुलझ जायेगी। मेरे विचार से एक अनुमान के आधार पर पांच व्यक्तियो के एक परिवार को करीब सवा लाख रूपया उर्जा सब्सीडी के रूप मे प्रतिवर्ष मिलता रहेगा । इससे श्रम मूल्य भी बढ जायेगा आर्थिक असमानता भी कम हो जायेगी तथा अन्य अनेक आर्थिक समस्याए अपने आप सुलझ जायेगी।

मै जानता हूँ कि भारत मे सम्पूर्ण अर्थ व्यवस्था पर पूंजीपति और बुद्धिजीवियों का एकाधिकार है। इस एकाधिकार के लिये ये दोनो राज्य का सहारा लेते है। भारत के ये बुद्धिजीवी और पूंजीपति कभी नही चाहेगे कि कृत्रिम उर्जा की मूल्य वृद्धि हो क्योकि एसा होते ही उन्हे मंहगा श्रम खरीदना होगा। आवागमन मंहगा हो जायेगा। उन्हे शहर मे रहने मे अधिक खर्च करना पडेगा। उनकी सुविधाएं घटेंगी और उन्हे कुछ अन्य परेशानियां भी होगी। यदि बिल्लियां मजबूत होंगी तो बंदर को परेशानी होगी ही । इसलिये ये दोनो ऐसा नहीं होने देंगे यह निश्चित है और इसके अलावा इस समस्या का कोई भी अलग समाधान है भो नहीं। मै चाहता हूँ कि भारत मे आर्थिक समस्या के आर्थिक समाधाान पर एक स्वतंत्र विचार मंथन की शुरूआत हो जिसस भारत के आम जन जीवन पर बुद्धिजीवी पूंजीपति षणयंत्र क विपरीत प्रभाव से मुक्ति मिल सके।

प्रश्न–नितेश कुमार कोली, – क्या आपको कोई ऐसी संभावना दिख रही है कि निकट भविष्य मे संघ परिवार और मोदी के बीच भी संबंध कमजोर हो सकते है ? आपने संघ परिवार को जो सलाह दी उसी तरह नरेन्द्र मोदी को कोई सलाह क्यो नही दी?

उत्तर–संघ परिवार से जुडे लोग उच्च चरित्रवान, ईमानदार, रुढिवादी और नासमझ होते है। वे परिस्थिति अनुसार लचीले नहीं होते। वे मस्तिष्क की अपेक्षा हृदय का अधिक उपयोग करते हैं। नरेन्द्र मोदी संघ प्रवृत्ति के ठीक विपरीत हैं। संघ समस्याओं के समाधान के प्रति कम और उसका श्रेय लेने के प्रति अधिक उत्सुक रहता है। संघ समस्याओं के विरुद्ध संघर्ष तो कर सकता है किन्तु समाधान न कर सकता है न सुझा सकता है। संघ प्रमुख एक तानाशाह होता है। उसे यह स्वीकार नहीं कि कोई दूसरा उसके समकक्ष हो। ज्यों ज्यों नरेन्द्र मोदी की लोकप्रियता बढेगी त्यों त्यों संघ प्रमुख का कष्ट बढेगा। अभी मुसलमानों और विपक्ष ने एकजुट होकर मोदी को चुनौती दी है इसलिए मोदी को संघ का समर्थन है किन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि संघ प्रमुख बिल्कुल निष्क्रिय हैं। 2019 में यदि मोदी को भरपूर समर्थन मिला ता संघ प्रमुख ही विपक्ष के रुप में सामने आयेंगे। मेरे विचार में मोदी की लाइन ठीक है और संघ की गलत क्योंकि मैं स्वयं हृदय की तुलना में मस्तिष्क प्रधान अधिक हूँ। इसलिए मैंने संघ को यह सलाह दी है और मोदी को नहीं। क्योंकि मोदी ठीक दिशा में चल रहे है।

प्रश्नोत्तर

श्री विश्वनाथ कुमार सीनियर लेक्चरर बडागांव कालेज वाराणसी उत्तर प्रदेश

विचार–सरकार और गांधीवादी उनकी सादगी सच्चाई एंव कर्मठता को तो नही अपनाते है परन्तु गांधी को भगवान बनाकर अपनी मठाधीशी चलाने का प्रयास करते है। गांधी जी ने ब्रिटेन मे पढते हुए ही तार्किक समाज का गठन किया था। उनसे प्रेरित होकर मै अपने मन मे उठने वाले तर्को एंव विचारो को प्रस्तुत कर रहा हूँ।

1 गांधी जी यह जानते हुए भी दक्षिण अफ्रीका मे बोअरों एंव जुलूओं का पक्ष न्याय का था (संदर्भ दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह का इतिहास 81 तथा संक्षिप्त आत्मकथा 1869 –1920 , 70–71 9 अंग्रेजो की सेना मे शामिल होकर अन्याय का साथ क्यो दिया?

2 आश्रम की युवा लडके लडकियां को एक साथ नदी मे स्नान करने के लिये भेजने तथा एक लडकी द्वारा छेडछाड की शिकायत करने पर पीडिता का ही बाल कटवा देना क्या न्यायोचित थाा? इससे अन्य छात्राए भी अन्याय सहने के लिये बाध्य नहीं हुई होंगी। (सदर्भ दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह का इतिहास 278–79
3 सांप आदि प्राणियों को मारने मे पाप की शिक्षा देना तथा कुछ दिनो बाद कमरे मे पाये गये सांप को मारने का आदेश देना कैसी अहिंसा थी । (सदर्भ दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह का इतिहास 285–288)

4 अंग्रेजो द्वारा बर्बर हिसा के जबाब मे अंग्रेजो की हत्या करने वाले क्रान्तिकारियों को आतंकवादी जबकि स्वामी श्रद्धानंद जी की हत्या करने वाले अब्दुल रशीद को भाई कहना उनकी किस मानसिकता का दर्शाता है, । (बापू कथा 86)

5 गांधी जी भारतीयों द्वारा की गई 1857 की क्रान्ति को महज बलवा दंगा /फसाद ही क्यो मानते थे। संदर्भ हिंद स्वराज्य 71

6 वे मांस की तरह पशु का दूध भी मनुष्य की खुराक नही मानते थे। गोरक्षा की बात करने वाले महात्मा ने गाय का दूध त्याग कर बकरी का दूध क्यो इस्तेमाल किया था? संदर्भ संक्षिप्त आत्मकथा 116 से 148

7 लोकतांत्रिक तरीके से निर्वाचित अपने नेता सुभाषचंद्र बोस का विरोध एंव असहयोग करना क्या नैतिकता थी? तत्कालीन प्रतिभावान नेता को किसके लिये रास्ते से हटाया था?

8 विश्वयुद्धों मे अंग्रेजो का साथ देना क्यो जरूरी था? प्रथम विश्वयुद्ध मे अंग्रेजो की तरफ से भाग लेने हेतु छ सप्ताह का शिक्षा क्रम सीखने के बाद ट्रेनिंग ली थी। परन्तु बीमार पड जाने के कारण इंगलैड से भारत वापस आ गये तब भारत मे ही अंग्रेजो की सेना मे यवाओ की भर्ती के लिये अभियान चलाते थे।

9 तुर्की के खिलाफत आंदोलन का भारत मे विस्तार करके भारतीय मुसलमानो का अंतर्राष्टीय करण क्यो किया?

10 1922 मे चरम पर पहुचते हुए आंदोलन को हिस्सा के नाम पर समाप्त करने से किसका भला हुआ था। जिसके चलते अंग्रेजो को 25 साल और ज्यादा शासन करने का मौका मिला।

11 भगत सिह की शहादत से आकोशित जन समूह को अपने साथ बनाये रखने के लिये आखिर 1942 मे करो या मरो जैसा हिंसात्मक उकसावे वाला नारा क्यो देना पडा था। ?

12 हिन्दुओ के हित मे कुछ भी नही करने के बावजूद गांधी जी रामराज्य की बात करके मुसलमानो मे गलत संदेश क्यो देते थे?

13 मुसलमानो द्वारा एक तिहाई निर्वाचन क्षेत्रो को आरक्षित करने की मांग न मानना पर 20 प्रतिशत आबादी के लिये एक तिहाई भूभाग क्यो दे दिया?

14कहते थे कि देश का विभाजन उनकी लाश पर होगा पर विभाजन उनकी सहमति से क्यो हुआ? संदर्भ बापू कथा 213–214

15 कांग्रेस कार्य समिति को बंटवारे पर सहमत करने के लिये सफल प्रयास क्यो किया था? बापू कथा 225

16 अगर बंटवारा अपरिहार्य ही था तो इसको योजनाबद्ध तरीके से किया जाना चाहिये था न कि 14 अगस्त 1947 की रात मे । जिसके चलते जो लोग भारत मे रहना चाहते थे वे पाकिस्तान मे तथा जो पाकिस्तान मे रहना चाहते थे वे भारत मे चले गये। अफरा तफरी मे करोडो लोग मारे गये? मां बहनो के उपर अत्याचार हुआ तथा बेघर हो गये। इसके लिये कौन जिम्मेदार था?

17 बंटवारे के बावजूद पुनः विभाजन का बीज भारत मे ही क्यों छोड दिया?

18 बहुमत सरदार पटेल के पक्ष मे था पर अपने विचारो से प0 जवाहर लाल को प्रधानमंत्री बनवाकर लोकतंत्र की हत्या क्यो की थी।

19 एक पिता के रूप मे अपने बच्चे की शिक्षा एंव स्वास्थ के साथ प्रयोग करना कहां तक उचित था? बडा पुत्र हरिलाल उनसे विद्रोही होकर मुसलमान बन गये थे तथा शराब एंव वेश्यावृत्ति के आदी हो गये थे।

20 अपनी पत्नी के अलावा अन्य महिलाओ के साथ ब्रम्हचर्य का प्रयोग करना कहा तक मर्यादित था?

21 गांधी जी अपनी असफलताओ (बच्चो की शिक्षा अंग्रेजो द्वारा वादाखिलाफी प्रतिज्ञाओ से विमुख होना हिन्दु मुसलिम दंगे बंटवारा अपने लोगो द्वारा उपेक्षा एवं विश्वासघात) को स्वयं ही स्वीकारते है पर आधुनिक गांधीवादी भूलो से शिक्षा लेने की बजाये उन्हे सही क्यो सावित करते है। ?

22 यदि गांधी के बताये गये मार्ग एंव किये गये व्यवहार इतने ही प्रासंगिक है तो उनके अनुयायियो की सरकारें उनको लागू करने के बजाये अपने हित मे लोगाो को अहिंसक बनाये रखने हेतु केवल गांधीवाद के प्रचार प्रसार का ढकोसला क्यो करती है?

उत्तर – मै एक दिसम्बर 17 को आपके कालेज मे आपके आमंत्रण पर भारत की आर्थिक व्यवस्था पर विचार रखने और प्रश्नोत्तर के लिये गया था । गांधी के विषय पर आपने पर्चा दिया था । समयाभाव के कारण मै वहां उत्तर नही दे सका था।

हम दो लोग अलग अलग तरीके से बगीचे म कुछ पेड लगाते है । आप अपनी मान्यताओ के अनुसार उसमे खाद पानी देते है और मै उसके ठीक विपरीत अपने तरीके से । आपके पेड फल नही देते और मेरे फल दे रहे हैं । प्रश्न यह नहीं है कि किसका तरीका ठीक था। प्रयोग ठीक है या गलत इसका अंतिम निष्कर्ष परिणाम ही देते है तर्क नही। स्वतंत्रता के समय एक गांधी मार्ग था और दूसरा क्रान्तिकारी मार्ग जिसमे सुभाष चंद्र बोस भगत सिंह तथा अन्य बहुत लोग थे। गांधी मार्ग से गांधी को छोडकर अन्य सब लोग असहमत थे जिसमे नेहरू अम्बेडकर सरदार पटेल संघ हिन्दू महासभा सुभाष चंद्रबोस भगत सिंह आदि सब थे। कुछ लोग किसी मजबूरी मे गांधी का साथ दे रहे थे तो कुछ खुले विरोधी थे । इसके ठीक अलग दो पक्ष इसमे निर्णायक थे। एक देश की जनता और दूसरा अंग्रेज प्रशासक। प्रश्न उठता है कि स्वतंत्रता संघर्ष मे देश की जनता गांधी के साथ अधिक गई या क्रान्किारियो के साथ । अंग्रेज गांधी के साथ सहमत हुए या क्रान्तिकारियों के साथ। गांधी मार्ग सही था या गलत इसकी एक मात्र कसौटी देश की जनता का समर्थन और स्वतंत्रता की प्राप्ति ही हो सकता था। गांधी अकेले एक मार्ग पर चल रहे थे तो क्रान्तिकारी ठीक भिन्न मार्ग पर । दोनो के बीच मे मार्ग की प्रतिस्पर्धा थी कि किसके साथ अधिक लोग सकिय होते है और किसे सफलता मिलती है। भगत सिंह ने जो प्रयत्न किया उसके बाद बहुत से लोगो ने कहीं और जाकर बम नहीं फेंका। सुभाष चंद्र बोस ने जो प्रयत्न किया वह प्रयत्न आगे नही बढ पाया लेकिन गांधी ने जो प्रयत्न किया वह प्रयत्न भले ही गलत हो किन्तु उसे पुरे देश का समर्थन मिला । आप विचार करिये कि किसका मार्ग सही था किसका गलत? सरदार पटेल को गांधी ने प्रधान मंत्री नही बनने दिया तो सरदार पटेल ने गांधी को कांग्रेस से क्यो नही निकाल दिया । स्पष्ट है कि गांधी के साथ जन समर्थन था और पटेल के साथ कांग्रेस पार्टी का समर्थन। क्या गांधी ने किसी को जन समर्थन प्राप्त करने से रोका था? बल्कि गांधी ने किसी की प्रगति मे कोई बाधा पैदा नही की। किसी क्रान्तिकारी की नीयत पर संदेह नही किया । गांधी अपनी लकीर को बडा करते रहे और संघ परिवार अथवा अन्य दूसरे लोग गांधी की लकीर को छोटा करते रहे। यदि ये अपनी लकीर को गांधी से बडा कर लेते तो गांधी का क्या महत्व रह जाता । आज आप गांधी की जिन कमजोरियो की चर्चा कर रहे है वे सारे दुर्गुण उस समय की भारत की जनता आज की तुलना मे अधिक जानती होगी फिर भी उसने गांधी का साथ दिया। और मै समझता हूॅ कि यदि आप भी उस समय रहे होते तो हो सकता है कि गांधी का साथ देते। असफल लोग अपनी असफलता के लिये इसी तरह दूसरो को दोष देते रहते है। आज भी आपने गांधी की जितनी समीक्षा की है उसकी तुलना मे यदि अपनी उपलब्धियो की चर्चा करते तो अधिक देश का भला होता।

आप जानते हैं कि उस समय एक तराजू पर अकेले गांधी खडे थे तो दूसरी तरफ तराजू पर सारे क्रान्तिकारी तथा गांधी विरोधी । नेहरू पटेल अम्बेडकर आदि भी आधे अधूरे मन से ही गांधी के साथ थे। लेकिन अकेले गांधी सारे बौने लोगो से भारी थे। क्योकि गांधी सत्ता और सम्पत्ति के अकेन्द्रियकरण के पक्ष मे थे तो बाकी सब सत्ता परिवर्तन के पक्ष मे । अन्य सब लोग भारत की जनता को सशक्त न करके स्वयं को मजबू त करना चाहते थे । तभी तो गांधी विरोधी विचार धारा ने गांधी की हत्या तक का कदम उठाना उचित समझा। जिस गांधी ने किसी प्रतिस्पर्धी की स्वतंत्र प्रतिस्पर्धा मे कभी कोई बाधा न पैदा करके अपना स्वतंत्र मार्ग चुना उस गांधी को प्रतिस्पर्धी लोगो ने पग पग पर बाधा पहुचाई और अंत मे समाप्त कर दिया । इसे मै गाधी की सफलता मानता हूॅ और अन्य लोगो की असफलता । गांधी के सारे कदम गलत हो सकते है किन्तु नीयत गलत नही थी । अन्य लोगो के सारे कदम ठीक हो सकते है किन्तु नीयत ठीक नही थी इसलिये तो स्वतंत्रता के बाद जोा राजनैतिक व्यवस्था आई उसमे भारत मे सत्ता और सम्पत्ति का निरंतर केन्द्रियकरण हुआ । अकेन्द्रियकरण नहीं। जो लोग क्रान्तिकारी बनना चाहते है, सुभाष और भगत सिंह के मार्ग पर चलना चाहते है, वे दूसरो से अपेक्षा क्यो कर रहे ह। क्यो नही वे स्वयं सुभाष और भगत सिह के मार्ग पर चल पडते है। किसने रोका है कि वे बम लेकर मत कूदें या शत्रुओं पर सीधा आक्रमण न कर दे।जो व्यक्ति अपने शहर के गुंडो से टकराने मे डरता हो वह भगत सिंह और सुभाषचंद्र बोस के मार्ग की शिक्षा दे यह समझ मे नही आता। गांधी ने कभी सुभाष चंद्र बोस से यह नहीं कहा कि वह रूस और अमेरिका पर आक्रमण न करें या वे सीधे ब्रिटेन पर हमला करके न जीत ले। इसलिये प्रश्न यह नही है कि गांधी गलत थे या नही । प्रश्न यह है कि गांधी के साथ न्याय हुआ या नही । मै समझता हूॅ कि गांधी ने अपने प्रतिस्पर्धीयों के साथ किसी प्रकार का कोई अन्याय नही किया और प्रतिस्पर्धी विचारो के लोगो ने गांधी के साथ कोई न्याय नही किया । उनकी कार्य प्रणाली ने दम नही था न ही आम लोगो का समर्थन था। जन समर्थन के अभाव मे गांधी की आलोचना करने के अतिरिक्त करने के अतिरिक्त उनके पास कोई काम नही था और आज भी सारे सत्ता लोलुप गांधी की प्रशंसा और आलोचना करते रहते है। किन्तु न तो प्रशंसा करने वाले समाज को लोक स्वराज्य देते है न आलोचना करने वाले । सत्ता और सम्पत्ति के केन्द्रीयकरण के मामले मे दोनो एक जुट हो जाते है। न गांधी की पूजा करने वाले परिवार गांव को सत्ता सम्पत्ति का अधिकार देने के पक्षधर है न ही गांधी की आलोचना करने वाले। मै गांधी का प्रशंसक नही किन्तु गांधी मार्ग का प्रशंसक जरूर हूॅ। मै सत्ता और सम्पत्ति के विकेन्द्रीयकरण का पक्षधर हूॅ । भले ही यह कार्य कोई मांसाहारी करे या शाकाहारी । भले ही यह कार्य कोई इन्द्रीयलोलुप करे या ब्रहमचारी । इसलिये मैने आपके पत्र का विस्तृत उत्तर देना उचित समझा।